मुझे प्रत्यक्ष दिखाई पड़ता है कि उफलस आदि सम्बन्धी परिस्थिति बड़ी ही विस्फोटजनक है, तथा मैं अपने देश की सुरक्षा के प्रश्न की विस्तार की बातों का अनुचित रूप से हवाला दे कर उलझाना नहीं चाहता हूं। परन्तु जिस विषय पर मैं सदन के नेता का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं वह यह है कि चीन उत्तर-पूर्वी सीमान्त अभिकरण के कुछ क्षेत्रों पर प्रभुता का दावा कर रहा है, तथा मैं चाहता हूं कि "मैक महा लाइन" की उचित परिभाषा की जाये तथा हमारी सीमान्त सुरक्षा को सुनिश्चित किया जाये अध्यक्ष महोदय, मेरे देश की सुरक्षा का प्रश्न सर्वोपरि है। हमारा ध्येय यही होना चाहिये तथा मुझे विश्वास है कि मेरा यह संक्षिप्त हस्तक्षेप भारत सरकार को शीघ्र कार्यवाही करने की प्रेरणा देगा। मैं यह कह सकता हूं कि पीकिंग में इन तथा अन्य विषयों पर, जैसे कैलाश पर्वत तथा मानसरोवर में हमारे प्रवेश के प्रश्न पर, पहिले ही वार्ता आरम्भ हो गई है। सिकियांग से लेकर गरतोक तक हमारे राजदूतालय, एक एक करके बंद हो रहे हैं, तथा मैं सदन का ध्यान इन विषयों की ओर इस कारण आकर्षित करना चाहता हूं कि हम विश्व शक्तियों से सब ओर से घिर गए हैं जो हमारी सीमाओं पर पैर जमा रही हैं। एक तो पाकिस्तानी खतरा है जिसमें अमरीका का सैनिक समझौता सम्मिलित है। इन सब बातों के परिणामस्वरूप स्थिति यह है कि हमें अपनी रक्षा व्यवस्था सुदृढ़ बनानी है।

श्रीमान्, मेरा एक संशोधन है जिसमें "राष्ट्रीय प्रति रक्षा व्यवस्था को दृढ़ बनाने, मुख्य कर हमारे रक्षा उद्योगों को स्थापित करने के लिये आवश्यक कार्यवाही करने; तथा राष्ट्रीय एकता प्राप्त करने के लिये कार्यवाही करने" का वर्णन है। यदि यह चर्चा परसों आरम्भ हुई होती तो इस सदन को विदित होता कि हम केवल अपने आयुध कारखानों के उत्पादन को ही नहीं घटा रहे हैं अपितु काम करने वालों की भारी छंटनी कर रहे हैं। देश भर में, चाहे यह खमरिया कारखाना हो, चाहे अम्बरनाथ कारखाना हो, कुछ झगड़ा है। मैं प्रधान मंत्री से, देश के रक्षा मंत्री के रूप में, यह आश्वासन चाहता हूं कि इन रक्षा उद्योगों में कोई ढील न होगी। हमें अपनी रक्षा-सामग्री के लिये विदेशों पर कभी भी निर्भर नहीं रहना चाहिये, यदि हम अपनी विदेश नीति का उचित रूप में पालन करना चाहते हैं।

अन्त में, अध्यक्ष महोदय, आप देखेंगे कि २० विभिन्न संशोधनों का सारे देश की एकता तथा रक्षा को दृढ़ बनाना है। सम्पूर्ण देश राष्ट्रीय एकता चाहता है। देश प्रधान मंत्री का समर्थक है। यह उन पर निर्भर है कि वह नीति को कार्यान्वित करें। मैंने कल तथा आज विभिन्न दलों के सदस्यों के भाषण सुने हैं। वे सब रक्षा के प्रश्न पर एकमत हैं। यदि प्रधान मंत्री की अपील, जो उन्होंने देहरादून तथा कलकत्ता में तथा कल यहां सभा में भी की थी, कार्यान्वित की जाये, तो मुझे विश्वास है कि, दुनिया को यह दिखाने के लिये कि देश एक है, प्रत्येक पुरुष, स्त्री तथा बच्चा उनकी नीति का समर्थन करेगा।

श्री जवाहरलाल नेहरू : अध्यक्ष महोदय, मुझे इस बात का सन्तोष है कि सदन ने कल मेरे लम्बे भाषण को धैर्य से सुनने की कृपा की थी। परन्तु मैं यह अनुभव करता हूं कि मेरे लिए सदन का और अधिक समय लेना उचित नहीं है। यह इस सत्र का अन्तिम दिन है तथा अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। फिर भी मैं कुछेक शब्द कहना चाहता हूं विशेष कर माननीय सदस्यों द्वारा कही गई बातों के सम्बन्ध में।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

जहां तक विदेश नीति का सम्बन्ध है, वास्तव में, अधिकांश सदस्यों ने मुझे चुनौती नहीं दी है । हो सकता है कि उन्होंने इसके किसी न किसी पहलू पर अधिक जोर दिया है । मुझे इस बात का संतोष है । फिर भी मुझे यह मानना पड़ेगा कि जब श्री वी० जी० देशपाण्डे ने कहा था कि उन्हें भी मेरी नीति में आशा की झलक दिखाई दे रही थी तो मुझे अपने काम के बारे में संदेह उत्पन्न होने लगा है क्योंकि सामान्यतः हमारा आपस में मतभेद है तथा जिस बात को वह ठीक समझते हैं मैं उसे गलत समझता हूं और जिसे मैं ठीक समझता हूं उसे वह गलत समझते हैं । फिर भी इस नीति की मुख्य बातों के सम्बन्ध में अधिकांशतः सहमति रही है, तथा वास्तव में जो भी आलोचना हुई है वह अधिकांश रूप से उन विषयों से अतिरिक्त विषयों पर हुई है जिन पर कल चर्चा हो रही थी । सम्भवतः कुछ माननीय सदस्यों ने यह अनुभव किया कि उनकी शैली संकुचित हो गई है क्योंकि मैं ने उन से प्रार्थना की थी कि वह अपनी टिप्पणी दो अथवा तीन विषयों तक ही सीमित रखें । सामान्यतः जब यह वाद-विवाद होता है तो माननीय सदस्य कई विषयों पर बोलते हैं—समस्त विश्व से सम्बन्धित समस्याओं पर बोलते हैं । चूंकि हमें अधिकांश रूप से कुछ विशिष्ट विषयों पर बोलना था इसलिये यहां भी कुछ बाधा तथा संकोच का अनुभव किया गया ।

मेरे माननीय मित्र आचार्य कृपलानी भी, जिनकी बातें सदैव ध्यानपूर्वक सुनी जाती हैं, इस बात को भूल गये कि हम विदेशी मामलों पर चर्चा कर रहे थे । उन्होंने निवारक निरोध अधिनियम आदि पर चर्चा करनी शुरू की । मेरी कठिनाई यह है कि इस बदलते संसार में विरोधी पक्ष के माननीय सदस्य परिस्थितियों के साथ साथ नहीं चलते हैं । वह भूत काल की बातें करते हैं तथा वर्तमान समस्याओं का सामना करने का प्रयत्न नहीं करते हैं । कल के नारे, कल की भाषा अथवा कल के तर्क आज लागू नहीं होते हैं ; यह एक स्पष्ट बात है । किन्तु फिर भी वह पुरानी बातें दुहराई जाती हैं चाहे वह संगत हों अथवा नहीं । एक बात जो साधारणतया उठाई जाती हैं राष्ट्रमंडलीय सम्बन्धों की है । वह इनकी ओर निर्देश किये बिना नहीं रह सकते हैं ।

यदि वह इसकी ओर निर्देश करने की अपेक्षा इन सम्बन्धों को समझने की कोशिश करते तो हमारा पथ तथा उनका पथ भी निष्कण्टक हो जाता । दुर्भाग्यवश, जो भी कोई बुरी बात होती है उसका कारण हमारे राष्ट्रमंडलीय सम्बन्ध बताये जाते हैं । राष्ट्रमण्डलीय सम्बन्ध अच्छे हों अथवा बुरे हों, मेरे विचार से वह अत्यन्त ही हितकर हैं तथा मैं इनके पक्ष में हूं । किसी राष्ट्रमंडलीय देश की नीति से सहमत अथवा असहमत होते हुए भी मैं इसका पक्षपाती हूं । केवल यही बात नहीं है । यह बताया जाता है कि राष्ट्रमंडल में रहने से ही अमुक बात हुई । इसका इससे कोई सम्बन्ध नहीं है, कोई संगति नहीं है । राष्ट्रमंडल में न रह कर भी वह बातें हो सकती थीं । आप स्वतन्त्र रूप से इस बात पर चर्चा कर सकते हैं कि क्या यह अच्छा है या बुरा; परन्तु यह न कहिये कि कोई विशिष्ट बात इसी के कारण हुई है ।

मुझे प्रसन्नता है कि मेरे माननीय मित्र श्री हीरेन मुखर्जी गीता का अध्ययन कर रहे हैं । मुझे आशा है कि वह इसका अध्ययन करते रहेंगे तथा उस श्लोक पर पहुंचेंगे जहां अर्जुन प्रश्न पूछता है तथा कृष्ण गौरवशाली

स्थित प्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव ।
स्थितधी किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम् ।।

मुझे आशा है कि हम सब इन गौरवमय शब्दों को जीवन भर याद रखेंगे तथा यथा शक्ति उन पर चलने का प्रयत्न करेंगे ।

मैं बड़े बड़े विषयों के सम्बन्ध में, जिन पर कि हम कल विचार कर चुके हैं, कुछ कहने का विचार नहीं रखता हूं । मैं इन पर काफी बोल चुका हूं । परन्तु मैं उन कुछेक बातों के सम्बन्ध में कहना चाहता हूं जिनका कि यहां उल्लेख किया गया है ।

आचार्य कृपलानी ने शिकायत की कि हम विदेशी मामलों के सम्बन्ध में दूसरी पार्टियों से परामर्श नहीं करते हैं । उन्होंने यह भी कहा कि अन्य देशों में विदेशी नीति एक राष्ट्रीय नीति होती है जिससे कि सभी पक्ष बड़ी हद तक सहमत होते हैं । मुझे ऐसे किसी देश की जानकारी नहीं है सिवाय उन देशों के जहां दूसरी पार्टियों को ज़िन्दा ही नहीं रहने दिया जाता है, जहां कि विदेशी नीति के सम्बन्ध में सभी पक्ष सहमत होते हों, सामान्यत: दृष्टिकोण में बहुत अन्तर रहता है । भूतकाल में जबकि विदेश नीति पर संकुचित दृष्टि से विचार किया जाता था, ऐसा करना ठीक ही था; परन्तु आजकल के समय में जबकि किसी देश की विदेश नीति आर्थिक मामलों तथा अन्य मामलों से सम्बद्ध होती है, सभी पार्टियां इस विषय पर सहमत नहीं होती हैं । चाहे यह यूरोप का कोई देश हो अथवा इंग्लैण्ड हो जो कि ऐसे मामलों में काफी अनुशासन प्रदर्शित करता है, वहां पार्टियों के दृष्टिकोण में बड़ा अन्तर रहता है तथा सरकार बदल जाने पर नीति भी बदल जाती है । कभी कभी विदेश मंत्री बदल जाने पर भी नीति बदल जाती है । शायद माननीय सदस्य संयुक्त राज्य अमरीका की दोनों पार्टियों की 'संयुक्त विदेश नीति' की बात सोच रहे हैं । कभी कभी मुझे उसे समझने में कठिनाई होती है । परन्तु वहां भी एक सरकार तथा दूसरी सरकार की नीतियों में भारी अन्तर रहता है । मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि यह कहना कि एक राष्ट्र की तथा इसकी विभिन्न पार्टियों की आवश्यक रूप से एक ही विदेश नीति होनी चाहिये ठीक नहीं है । बात यह नहीं है कि मैं इसके विरुद्ध हूं, परन्तु मैं विरोधी पक्ष के सदस्यों से पूछना चाहता हूं कि क्या वह आपस में एक ही नीति के सम्बन्ध में सहमत हैं ? कई पार्टियां हैं तथा उनके नेता हैं, क्या वह स्वयं एक ही विदेश नीति के सम्बन्ध में सहमत हैं ? मैं निवेदन करना चाहता हूं कि वह सहमत नहीं है । कुछ मामलों में वह सहमत ही सकते हैं, कुछ में नहीं हो सकते हैं । अधिकांश रूप से उनकी एक ही नीति नहीं है । मैं परामर्श करने के पक्ष में हूं तथा परामर्श करना ठीक भी है विशेषकर संकटकाल में तथा कठिनाइयों के समय । ऐसे समय में सारे राष्ट्र को संगठित रहना चाहिये तथा हमें आपस में परामर्श करते रहना चाहिये । मैं इस बात से पूर्णतया सहमत हूं, परन्तु यह कहना कि विदेश नीति निर्धारित करते समय हमें विभिन्न विचारधाराओं को ध्यान में रख कर काम करना चाहिये, ठीक नहीं है क्योंकि इस तरह से तो हम विदेश नीति के विषय को विभिन्न पार्टियों में एक वाद विवाद का एक विषय बना देंगे । जहां इस तरह की नीति संकट काल में सफल नहीं होगी वहां इससे कठिनाइयां भी उत्पन्न होंगी । यदि युद्ध को एक संकटकाल माना जाये तो जैसा कि 'मैकाले' ने कहा है कि कभी कभी खराब सेनापति भी युद्ध में विजयी हुए हैं, परन्तु लड़ाइयां कभी किसी वाद विवाद गोष्ठी में नहीं जीती गई हैं ।

अब सुझाव यह दिया जाता है कि हमें विदेश नीति से सम्बन्धित मामलों को वाद विवाद तथा आपसी परामर्श का विषय बनाना

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

चाहिये। मैं परामर्श के पक्ष में हूं परन्तु किसी एक व्यक्ति को उस नीति की ज़िम्मेदारी उठानी चाहिये। अन्यथा इसके लिए कोई ज़िम्मेदार नहीं होगा। इसमें कोई समनुकूलता नहीं होगी। इससे अच्छा यह होगा कि कोई समनुकूल नीति हो, क्योंकि बिना समनुकूलता के कोई नीति नहीं चल सकती है।

आचार्य कृपालानी (भागलपूर व पूर्निया): श्रीमान्, मुझे बहुत खेद है। मैं अपना सुझाव वापस लेता हूं। राष्ट्र की विदेश नीति एक व्यक्ति की नीति हो।

श्री जवाहरलाल नेहरू: आचार्य कृपालानी ने कहा कि वह किसी गुट में शामिल न होने की नीति के पूर्ण समर्थक हैं परन्तु हम जो कि इसका दावा करते थे उनके कथनानुसार इसे भूल गये हैं। मुझे मालूम नहीं कि उनका आशय क्या था। यह एक तथ्य है कि हम इस संसार में रह रहे हैं तथा हमें अपने पड़ौसियों से सहयोग करना है। एक राष्ट्र अथवा एक सरकार के रूप में हमने अभी सन्यास नहीं लिया है। हमें संसार के देशों से सहयोग करना है। उनसे कुछ लेना है कुछ देना है। हमें कई ऐसी बातें माननी हैं जो हमें पसन्द नहीं हैं, तथा इसी तरह से दूसरों को भी हमारी बहुत सी ऐसी बातें माननी हैं जो उन्हें पसन्द नहीं हैं। तो फिर यह कहना कि हम अपने को अनिन्दनीय तथा निर्दोष समझते हैं तथा हमें किसी ऐसे व्यक्ति को जो हमारे आदर्शों पर न चलता हो हाथ भी नहीं लगाना चाहिये कोई यथार्थवादी नीति नहीं होगी। हम संयुक्त राष्ट्र संघ में जाते हैं; वहां कई देशों के प्रतिनिधि हैं। उनमें से हम कई लोगों को दूसरों की अपेक्षा अधिक पसन्द करते हैं, हम वहां कई पक्षों के साथ परामर्श करते हैं, बातचीत होती है तथा समझौते होते हैं। हम वहां यह नहीं कहते हैं कि 'आप हमारी बात मान जाइये नहीं तो हम जाते हैं।' देशों का आपसी व्यवहार ऐसा नहीं होता है, व्यक्तियों का भी सामान्यतः ऐसा नहीं होता है। तो ऐसे मामलों के सम्बन्ध में संयुक्त राष्ट्र संघ में अथवा उनके बाहर कोई समझौता करना होता है, यह ठीक है कि जब हम आपसी समझौते की आदेशिका का समर्थन करते हैं तो इस बात का डर रहता है कि कहीं हम अपने सिद्धान्तों से दूर तो नहीं जा रहे हैं अथवा फिसलने का तो कहीं डर नहीं है; ऐसी बात हो सकती है। परन्तु इसका कोई उपाय नहीं है, आपको इसका सामना करना ही होगा तथा सावधान रहना होगा। आप यह नहीं कह सकते हैं कि "हम किसी ऐसे व्यक्ति से बात नहीं करेंगे जो हमारी बात नहीं मानेगा।" मैं इस तर्क को कुछ स्थूल रूप में पेश करूंगा। मैं यह कहूंगा कि मैं केवल ऐसे लोगों से बात करूंगा जो कि मेरी भाषा हिन्दी बोलते हों। कुछ समय के लिए इसका कुछ अच्छा प्रभाव पड़ सकता है। परन्तु ऐसा करने से मेरे सम्बन्ध शेष संसार से विच्छेद हो जायेंगे। विचारों तथा विचारधाराओं के सम्बन्ध में भी ऐसी ही बात हो सकती है। मान लीजिये कि मैं कहूं कि मैं किसी ऐसे व्यक्ति से बात नहीं करूंगा जो मेरे विचारों को न मानता हो तो यहां भी मैं अलग थलग हो जाऊंगा। विचारों का सामंजस्य, आदान प्रदान तथा इस बदलते संसार की सूझ बूझ यह सारी बातें होनी चाहियें। संसार को छोड़ दीजिये, अपने देश को ही लीजिये। भारत की जनता पूर्व, पश्चिम, उत्तर दक्षिण में सारवत् एक ही सी है। सारे देश में बड़ी दृढ़ समनुरूपता तथा एकरूपता है परन्तु फिर भी यहां तरह तरह की विचित्रतायें हैं जो कि एक बड़ी बात है। हम इस विचित्रता का स्वागत करते हैं। हम सब लोगों को एक ही लकड़ी से नहीं हांक सकते हैं। हमें अपने आपको एक दूसरे के अनुकूल बनाना है तथा जनता को उस जिस तरह से वह चाहे काम करने की स्वतंत्रता देना है। इसलिये अन्त-

र्राष्ट्रीय मामलों में हमारा रवैया यह नहीं हो सकता है कि 'आप मेरी बात मान जायें। अन्यथा मेरा आप से कोई वास्ता नहीं है।' इसका परिणाम यह हो सकता है कि आप दूसरों से अलग थलग रहेंगे। परन्तु यह सम्भव नहीं है। यदि हम ऐसा करना भी चाहें तो भी ऐसा नहीं हो सकता हैं। जिस युग में हम रह रहे हैं वह अणु युग का आरम्भ है आज जेट-वायुयानों का युग है जो कि पल भर में कई मीलों की उड़ान करते हैं। तो यदि हम किसी ऐसी प्रस्थापना से जो कि हमारी पसन्द की न हो, सहमत होने की बात करते हैं तो दूसरे भी हमारी कई ऐसी बातों से सहमत होते हैं जो कि उनको पसन्द नहीं होती हैं। काम निभाने का यही ढंग होता है। प्रश्न केवल यह है कि क्या हम किसी ऐसी बात को तो नहीं मानते हैं जो कि मूलतः खराब हो अथवा जो हमारी मूल नीति में व्यवधान उत्पन्न करती हो आदि। गौण बातों पर इसका क्या प्रभाव पड़ता है, यह भी हमें देखना होता है, वैदेशिक मामलों के सम्बन्ध में मुख्य बातों पर ही अधिक ध्यान दिया जाता है। पूर्ववर्तिताओं का महत्व है तथा यह भी आवश्यक है कि आप किस विशिष्ट बात को पहला स्थान देते हैं, किसे दूसरा स्थान देते हैं तथा किसे तीसरा देते हैं। यदि आप हर बात को तीसरा स्थान देने की ही सोचेंगे तो प्रथम स्थान तथा द्वितीय स्थान स्वयं समाप्त हो जाते हैं। इसलिये पहिली बात को प्रारम्भ करने के लिए, जो कि सबसे अधिक महत्व की हो, आपको दूसरी तथा तीसरी बात को उठा रखना ही होगा, चाहे इससे आपको कुछ तकलीफ ही क्यों न हो।

आचार्य कृपालानी ने कहा कि हमें कोरिया में नहीं जाना चाहिये था तथा काश्मीर का मामला संयुक्त राष्ट्र संघ को नहीं निर्दिष्ट करना चाहिये था। मैं देखता हूं कि हमारे अनेक विरोधी मित्रों की नीतियां सामान्यतया नकारात्मक हैं—कि हमें क्या नहीं करना चाहिये। तो क्या मैं सन् १९५३ में इस बात पर तर्क प्रस्तुत करूं कि सन् १९४७ में हमें क्या करना चाहिये था और क्या नहीं करना चाहिये था? इस तरह क्या हम उन समस्याओं को उनकी वर्तमान स्थिति में समझ सकते हैं? सन् १९४७ में जो कुछ किया गया था, मैं उस के सम्बन्ध में तर्क दे सकता हूं। किन्तु हम उन समस्याओं पर विचार कर रहे हैं जो आज हमारे सामने हैं, और मेरी कठिनाई यह है कि विरोधी दल के माननीय सदस्य वर्त्तमान में नहीं आते हैं। वे विगत घटनाओं के ताने-बाने में भी उलझे हुए हैं। एक क्षण के लिए मान लीजिये कि हमने एक नहीं सौ गलतियां २ या ५ या ७ वर्ष पूर्व की थीं। तो फिर उनका किया क्या जाये? हमें तो आज की परिस्थिति का सामना करना है, वर्तमान में आना है।

विरोधी माननीय सदस्यों मे कोरिया के विषय में पूछा। हम कोरिया क्यों गये? क्या आदर, सम्मान या प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए हम वहां गये हैं? हम कोरिया में इसलिये गये कि यदि हम वहां न जाते तो वहां शान्ति न हुई होती तथा विनाशकारी युद्ध, विस्तार की सम्भावनाओं के साथ, चलता रहता। जैसा हमने समस्याओं को उस समय देखा—और जैसा कि बाद की घटनाओं ने प्रमाणित कर दिया है—उस संकल्प को पहले संयुक्त राष्ट्र संघ में और फिर दोनों कमानों के मध्य मान्यता प्रदान कराना भारत के लिये एक खाई को पाटना था, जिसे कोई और नहीं कर सकता था। कोई अन्य देश उसके लिये तैयार नहीं था। यदि यह समझौता न होता तो युद्धबन्दी नहीं होती तथा भयानक लड़ाई जारी रहती। इसलिये अत्यन्त संकोच के साथ हमें समस्या का सामना करना ही पड़ा। हमने यह कार्य स्वीकार किया, और मैं इसे एक बार नहीं सौ बार स्वीकार करूंगा,

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

क्योंकि अपने ही देश के प्रति नहीं, अन्य देशों के प्रति भी मेरा कुछ कर्त्तव्य है। मुझे बहुत अचम्भा हुआ जब मैंने देखा कि, केवल इस सदन में ही नहीं, एक दो मास से कुछ अखबारों में भी लोग कहते तथा लिखते हैं कि "कोरिया से हमारी सेनाओं को तत्काल वापस बुला लो।" मुझे ऐसी बात सुन कर बड़ा आश्चर्य होता है, वह व्यक्ति इस प्रश्न पर ज़रा भी उत्तरदायित्वपूर्ण तरीक़े से विचार नहीं करते हैं। हमारा देश कोई बड़ा सैनिक राष्ट्र नहीं है, न ही कोई बड़ा धनिक राष्ट्र है; किन्तु हमारे कुछ मापदण्ड हैं जिनसे कि हम एक राष्ट्र के रूप में कार्य करते हैं। चूंकि किसी ने कोई ऐसी बात कह दी, चूंकि प्रेसीडेंट री ने कोई ऐसी बात कह दी जिसे हम पसन्द नहीं करते हैं, तो क्या इस कारण वहां से हमें अपने सैनिकों को वापस बुला लेना चाहिये ? यह तो गैर-जिम्मेदारी की पराकाष्ठा होगी। जब तक इन मामलों के प्रति हमारा उत्तर-दायित्व है, तब तक हम ऐसा नहीं करेंगे। हम अपनी पूरी सामर्थ्य और योग्यता के साथ अपना कर्त्तव्य-पालन कर रहे है। हमारी सामर्थ्य और योग्यता सीमित हो सकती है किन्तु जहां तक हम यह कार्य कर सकते हैं, हम निष्पक्षता और सचाई के साथ इसे करेंगे।

श्री मुकर्जी का विचार है कि अधिकतर बुराइयां राष्ट्रमंडल से हमारे सम्बन्ध के परिणामस्वरूप हैं। उनकी धारणा है कि हमारे देश से मोनाज़ाइट भेजे जाने का राष्ट्रमंडल से सम्बन्ध है। विदेशी विशेषज्ञ भी यहां इसीलिये आते हैं और गुरखाओं को खुखरी भी इसीलिये दी जाती हैं। हमें इन आरोपों पर विचार करना चाहिये।

श्री मुकर्जी ने कहा कि "मोनाज़ाइट बाहर जाता है तथा बमों के रूप में वापस आता है।" श्री मुकर्जी के लिए मेरे हृदय में सम्मान है, किन्तु उनकी बातें बहुधा तथ्यों के विरुद्ध जाती हैं। हमारे पास काफी मोनाज़ाइट है और हमने इसके निर्यात पर प्रतिबन्ध लगाया है। किन्तु ऐसी वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए, जिनकी कि हमें अत्यधिक आवश्यकता है और जो हमारे पास नहीं हैं— जैसे आणु-विक शक्ति के सम्बन्ध में कोई चीज़ —हम अवश्य ही इसका विक्रय करते हैं, अथवा वस्तु विनिमय करते हैं। कोई भी देश इस प्रकार प्रगति नहीं करता है। इस डर से कि कहीं कोई उस को काम में न ले आये यदि हम अपनी चीज़ का विक्रय बन्द कर दें तो हमें वह वस्तु नहीं मिलेगी जिसकी कि हमको आवश्यकता है। इसलिये ऐसी अवस्था आ जाती है कि हमें निर्णय करना होता है कि हम अपनी क्या चीज़ दें, किसे दें, किस मूल्य पर दें और कितनी मात्रा में दें। हमने लगभग आधे दर्जन देशों को बहुत थोड़ी मात्राओं में मोनाज़ाइट दिया है, कभी-कभी ऐसी ही वस्तुओं के बदले में जिनकी हमको स्वयं मोनाज़ाइट को विकसित करने के लिए आवश्यकता है। किन्तु यह सोचना कि किसी दबाव में आकर हम ऐसा कर रहे हैं, एक दम असत्य है। हमने त्रावनकोर-कोचीन सरकार के साथ मिलकर मोनाज़ाइट को इसीलिये अपने कब्ज़े में ले लिया है जिससे कि यह प्राइवेट हाथों में पड़ कर अनियंत्रित रूप से परिचालित न हो। यह निर्यात किया जाता है, लेकिन उन वस्तुओं के बदले में जिनकी हमको बहुत ज़रूरत है।

आणुविक बम बनाने की या उसके सम्बन्ध में प्रयोग करने की न तो हमारी इच्छा है और न सामर्थ्य ही है। किन्तु हम नागरिक प्रयोग के लिए आणुविक शक्ति के विकास में अवश्य अभिरुचि रखते हैं, और यह नितान्त सम्भव है कि १० या १५ वर्ष में आणुविक शक्ति, शक्ति के एक विशाल तथा सरल साधन के रूप में नागरिक प्रयोजनों के

लिए उपलब्ध हो जाये । जब ऐसा सम्भव होगा, तो तत्काल तो नहीं अपितु यथासमय शक्ति-प्रदाय का समस्त प्रश्न ही एकदम बदल जायेगा । अब तनिक कल्पना कीजिये कि इससे देश में कितना महान् अन्तर आ जायेगा । अमरीका जैसे देश में नागरिक कार्यों के लिए इसकी अधिक आवश्यकता नहीं है, क्योंकि विद्युत् शक्ति वहां बहुतायत से उपलब्ध है । किन्तु हमारे देश में तथा अन्य अल्प-विकसित देशों में इससे बड़ा अन्तर पड़ेगा । विद्युत् शक्ति के विकास के साथ, लगभग १५० वर्ष पूर्व औद्योगिक क्रान्ति हुई थी । अब हम उससे भी बड़ी क्रान्ति के निकट हैं जो कि संसार को बदल देगी, बशर्ते कि युद्ध ही संसार को नष्ट न कर दें, किन्तु यह एक भिन्न बात है । हमारा राष्ट्र उन चुने हुए कुछ राष्ट्रों में है जहां आणुविक शक्ति के प्राथमिक प्रक्रमों में अच्छी प्रगति हो चुकी है । एशिया में हमारा ही एक ऐसा देश है जो कुछ आगे बढ़ा है । इस काम में हम मोनाज़ाइट का प्रयोग करते हैं, हम इसे सुरक्षित रखते हैं और इसे ऐसे व्यक्तियों को देते हैं जो हमें इसके प्रयोग का तरीका बतलाते हैं । हमने फैक्टरियां स्थापित की हैं; वह भी मोनाज़ाइट लेती हैं और उसका परिशोधन करती हैं । अगला प्रक्रम यह है कि हम स्वयं इसका परिशोधन करें । इसलिये किसी के दबाव में आकर किसी को दे देने का कोई प्रश्न नहीं है ।

फिर, श्री मुकर्जी ने विदेशी विशेषज्ञों के विषय में कहा । किन्तु मेरी यह समझ में नहीं आता कि उन्हें एक राष्ट्र विशेष के विशेषज्ञों पर आपत्ति है, विदेशी विशेषज्ञों की सहायता लेने के सिद्धान्त पर आपत्ति नहीं है । यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि हम अपने उद्योगों, टेकनीक विज्ञान को विकसित करना चाहते हैं । इसके लिये हम विशेषज्ञ पथ-प्रदर्शन चाहते हैं । विशेषज्ञों के बिना भी हम विकास कर सकते हैं, लेकिन इसमें दस गुना अधिक समय लगेगा । प्रत्येक देश ने दूसरे देशों से विशेषज्ञ प्रविधिक (टेकनीकल) परामर्श लिया है । हम सर्वोत्तम उपलब्ध प्रविधिक परामर्श चाहते हैं और यदि इसके लिए हमें यदि बाहर से व्यक्ति बुलाने पड़ें तो बुलाने चाहियें । इन विशेषज्ञों का काम यह भी होता है कि हमारे कर्मचारियों को उस काम में प्रशिक्षित करें । हम इस देश में कुछ बड़े विशाल कार्य कर रहे हैं जिनकी तुलना विश्व में अन्य स्थानों पर किये जा रहे किन्हीं भी विशाल कार्यों से की जा सकती है । हमने नदी घाटी परियोजनायें प्रारम्भ की हैं । कुछ माननीय सदस्यों ने उन्हें देखा है और बहुधा उन्होंने उनकी आलोचना की है । किसी विशिष्ट बात के बारे में आलोचना सही या गलत हो सकती है, किन्तु वास्तविकता यह है कि वे उत्कृष्ट कार्य हैं और सर्वोत्तम रूप से किये गये हैं । जो भी उन्हें देखता है, यही अनुभव करता है, चाहे वह देखने वाला भारत के किसी भी भाग से आया हो अथवा चीन से आया हो या रूस से । गलतियां जो भी हुई हों, उनके अनपेक्ष भी यह उत्कृष्ट कार्य हैं और सर्वोत्तम रूप से किए गये हैं ।

यह याद रखना चाहिये कि यह एक विशाल कार्य है । इसे प्रारम्भ करने के लिए साहस की आवश्यकता है । इसे हम ऐसे व्यक्तियों के सुपुर्द नहीं कर सकते जो चोटी के व्यक्ति न हों । इस विशिष्ट पहलू को देखते हुए, वर्तमान पीढ़ी में भी हमारे इंजीनियर बहुत अच्छे हैं और प्रगति कर रहे हैं तथा इन बड़े-बड़े कार्यों से अनुभव प्राप्त कर रहे हैं; और मुझे विश्वास है कि कुछ वर्षों में वे बड़े से बड़े कार्य सम्भाल सकेंगे । किन्तु अभी तो हमें बाहर के विशेषज्ञों से सहायता लेना लाभ-दायक होगा । आर्थिक रूप से यह प्रश्न कुछ अनावश्यक सा है कि हम उन्हें पारि-श्रमिक क्या देते हैं । क्योंकि वे हमारा इतना

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

काम करते हैं इसलिये विदेशी विशेषज्ञों का प्रश्न इस दृष्टि से देखा जाना चाहिये।

गुरखों तथा खुखरियों की बात इस प्रकार है। वर्तमान समय में ये हथियार युद्ध के हथियार नहीं रह गये हैं। आज का युग अणु और बमों का युग है। यह सत्य है कि मलाया में गुरखों के लिए हमने बहुत सी खुखरियों के निर्यात किये जाने की अनुमति दी। किन्तु वह इसलिये दी क्योंकि जिस प्रकार कृपाण सिक्खों का एक धार्मिक पहनावा बन गया है उसी प्रकार खुखरी गुरखों का धार्मिक चिह्न है।

डा० लंका सुन्दरम् ने कुछ ऐसी बातें बताई हैं, जिन्हें सुन कर मुझे कुछ आश्चर्य हुआ है। मुझे विदित नहीं कि भारत-तिब्बत सीमा पर हुई दुर्घटनाओं से सम्बन्धित यह जानकारी उनको किस सूत्र से मिली है। उन्होंने कहा कि एक लाख—या शायद मैं भूल रहा हूं, ५० हजार—फ़ौज वहां इकट्ठी है। मेरे पास भी जानकारी प्राप्त करने के कुछ साधन हैं, पर ऐसी सूचना मुझे नहीं मिली है। मुझे प्रसन्नता होगी, यदि डा० लंका सुन्दरम् उस विषय में मुझे कुछ सूचना दें, जिस से कि मैं उसकी जांच कर सकूं। मैं सीमा के दोनों ओर से निकट सम्पर्क में रहता हूं, और जहां तक मेरा सम्बन्ध है, उनके द्वारा बताई गई संख्या बिल्कुल ग़लत है। मैं यह भी कहना चाहूंगा कि एक रूप में—उस रूप में जिसमें डा० लंका सुन्दरम् इसे रखेंगे—पेकिंग में अगले सप्ताह चीन के साथ होने वाली हमारी बातचीत का पाकिस्तान की संयुक्त राज्य अमरीका से मिलने वाली सैन्य-सहायता से सम्बन्ध प्रतीत हो सकता है।

डा० लंका सुन्दरम : मेरा अभिप्राय यह नहीं था।

श्री जवाहरलाल नेहरू : मैं जानता हूं कि आपका अभिप्राय यह नहीं था, पर सदस्यों ने यह सोचा अवश्य होगा। वस्तुतः इस पेकिंग-वार्ता को ले कर महीनों से पत्र-व्यवहार चल रहा था और अन्त में लगभग तीन महीने पहले हम नें चीन सरकार को यह सुझाव दिया था कि हम दिल्ली या पेकिंग में उसके साथ कुछ बातचीत करना चाहेंगे। उस पर वे पेकिंग के लिए तैयार हो गई। हमने अपने राजदूत को यहां बुलाया। हमने उस से बातें कीं, और अब वह वापस चला गया है और हमारे वैदेशिक कार्यालय के एक-दो पदाधिकारी भी वहां जा रहे हैं। मेरे विचार से इस वर्ष के समाप्त होने से पहले ही बातचीत शुरू हो जायेगी। परन्तु उसका सम्बन्ध तिब्बत से होने वाले व्यापार और यात्रा आदि समस्याओं को छोड़ किसी अन्य समस्या से नहीं है।

डा० लंका सुन्दरम् ने कुछ नकशों, मैकमोहन लाइन और तिब्बत के ऊपर चीन के अधिराज्य सम्बन्धी दावों आदि का भी निर्देश किया है। वस्तुतः मैं चीन सरकार की ओर से कोई बात नहीं कह सकता कि उसके मन में क्या है या क्या नहीं है। पर मुझे ज्ञात है कि विगत दो-तीन वर्षों में क्या हुआ है। इन समस्याओं पर विशेषतः तिब्बत के विषय में हमने उससे बार-बार बात की है, क्योंकि तिब्बत में भारतीय व्यापार, यात्रा आदि के विशेष हित हैं। कभी भी उसके द्वारा या किसी दूसरे के द्वारा सीमान्त समस्याओं के विषय में कोई बात छेड़ी नहीं गई है। इस सदन को अच्छी तरह ज्ञात है कि प्रश्नों के उत्तर में अथवा विदेश-समस्या विषयक चर्चाओं में मैं बारम्बार बता चुका हूं कि जहां तक हमारा सम्बन्ध है सीमान्त सम्बन्धी चर्चा करने का कोई प्रश्न नहीं है। सीमा यथापूर्व है और मैकमोहन लाइन भी यथापूर्व है, और हमें

इसके विषय में चीन सरकार या किसी अन्य सरकार से कोई बात नहीं करनी है। अतः बात यहीं समाप्त हो जाती है। यह प्रश्न ही नहीं उठता है। अतः हमारे अधिकारी वहां सीमान्त-समस्या पर बातचीत करने नहीं गये हैं। यह बातचीत का विषय नहीं है।

डा० लंका सुन्दरम् ने वैदेशिक कार्य मन्त्रालय की किसी पुस्तिका का निर्देश किया था, जिसमें अनिर्दिष्ट सीमा के विषय में कुछ कहा गया है। मैं स्मृति के बल पर यह बात कह रहा हूं, पर जहां तक मुझे याद है, उसका सम्बन्ध ब्रह्मा की सीमा से है। विशेषतः नागा प्रदेश में एक क्षेत्र वस्तुतः सुनिर्दिष्ट नहीं है, और उसके विषय में ब्रह्मा सरकार से अस्पष्ट बातें हुई हैं। जहां तक मैकमोहन लाइन का सम्बन्ध है, यह बहुत पहले निश्चित की गई थी। यह ठीक है कि यह नकशे में ही निश्चित की गई है और खंभे आदि लगा कर इसे निश्चित नहीं किया गया है, अतः कभी-कभी कुछ सन्देह हो सकता है।

डा० लंका सुन्दरम : मेरे द्वारा उद्धृत ज्ञापन श्री रामाध्यानी द्वारा निर्दिष्ट किया गया था और उस पर वैदेशिक कार्य मंत्रालय की टिप्पणियां थीं। इसका सम्बन्ध तिब्बत, आसाम और ब्रह्मा से था, तथा इसकी प्रति पुस्तकालय में है।

श्री जवाहरलाल नेहरू: मैं उसके विषय में कुछ नहीं कह सकता। यह सम्भव है।

संविधान सभा के बाद से हमारे ऐतिहासिक विभाग ने इस पर बहुत विचार किया है और इसके विषय में हमें बहुत अधिक जानकारी प्राप्त हो गई है। पर जैसा कि मैंने बताया, ब्रह्मा और भारत के बीच कुछ अनिर्दिष्ट क्षेत्र था और उसे स्पष्ट करने के लिए ही नहीं, अपितु उचित समन्वय के लिये थोड़े बहुत प्रदेश की अदला बदली के भी कुछ प्रस्ताव रखे गये थे। पर बात वहीं की वहीं रह गई।

कई माननीय सदस्यों ने रक्षा-उद्योगों की गति की तेज करने की बात कही है। उसकी गति को तेज करने में मुझे बहुत प्रसन्नता होगी। वस्तुतः रक्षा-उद्योगों के विषय में हमने जो प्रगति की है, या हम जो प्रगति कर रहे हैं, वह बहुत काफ़ी है। इन बड़े उद्योगों की स्थापना में कुछ वर्ष लग जाते हैं, पर वह कोई विशेष बात नहीं है। कुछ उद्योग चल रहे हैं, कुछ स्थापित किये जा रहे हैं, और कुछ की नींव रखी जा रही है। मैं तीव्र गति से प्रगति करना पसन्द करूंगा। यह केवल धन की बात ही नहीं है, यद्यपि वह भी एक विचारणीय प्रश्न है। प्राविधिक प्रशिक्षण का भी प्रश्न है। वह मांगते ही नहीं मिल जाता है। वह धीरे-धीरे ही मिलेगा। हम औरों की अपेक्षा तेजी से प्रगति कर सकते हैं, पर फिर भी हमें विकसित तो होना ही होगा। अन्त में यह देश के औद्योगिक विकास का एक अंग बन जाता है।

मैं उन माननीय सदस्यों से पूर्णतः सहमत हूं कि हमें अन्य देशों पर निर्भर नहीं रहना चाहिये। वस्तुतः कोई भी पूरा-पूरा शत-प्रतिशत आत्मनिर्भर या स्वतन्त्र नहीं हो सकता है। कुछ न कुछ पर-निर्भरता किसी न किसी बात के लिए रहती ही है, और रहनी भी चाहिये, इसमें कोई हानि नहीं है। पर किसी को इस सीमा तक पर-निर्भर नहीं हो जाना चाहिये कि वह दुर्बल हो जाये तथा उचित रूप से कार्य कर सकने में असमर्थ ही जाये उद्योग आदि स्थापित करने में समय लगता है। यदि आप दूसरे देशों की ओर देखें तो पता चलेगा कि उनको इस सशक्त स्थिति में पहुंचने में बहुत समय लगा है और मेरे विचार से गत छः वर्षों में हमने जो प्रगति की है उसे नगण्य नहीं कहा जा सकता है।

एक बात मैं और कहना चाहूंगा। श्री देशपांडे ने हमारे अमरीका या कुछ अन्य देशों

[श्री जवाहरलाल नेहरू:]

के पास भिक्षा-पात्र लेकर सहायता के लिए जाने की बात का बारम्बार निर्देश किया था। म यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि कभी भी हमारे यहां से कोई भी भिक्षा-पात्र लेकर कहीं नहीं गया और न कभी भविष्य में ही हम ऐसा करना चाहते हैं। सम्मानपूर्ण शर्तों पर मिलने वाली सहायता का हम स्वागत करते हैं, क्योंकि इससे हमें अपनी औद्योगीकरण की प्रगति को तेज करने में सहायता मिलती है। पर साधारणत: सहायता हमें मिली है; और बातचीत का प्रारम्भ तक दूसरी ओर से किया गया है। हमने उसका स्वागत किया है। हमने उस पर बातचीत चलाई है और हमने उसके लिए अपनी सहमति अथवा असहमति प्रकट की है। "भिक्षा पात्र" लेकर जाने का कोई प्रश्न नहीं है; वह न तो देने वाले के लिए अच्छा है और न लेने वाले के लिए ही।

मैंने यह भी नहीं कहा कि यदि पाकिस्तान सहायता स्वीकार करता है, तो उससे युद्ध अवश्यम्भावी हो जाता है। मैंने ऐसा सुझाव कभी नहीं दिया। मैंने यही कहा था कि इस प्रकार की बातों से शान्ति में बाधा पहुंचती है। यह शान्ति के आड़े आती है; यह शान्ति को नष्ट करने वाला एक कारण है। यह स्वयं इतना महत्वपूर्ण नहीं है कि इससे ही युद्ध छिड़ जाये या शान्ति स्थापित हो जाये; और भी बहुत सी बातें हैं, जो अन्त में सारी घटनाओं पर प्रभाव डालती हैं।

श्रीमान्, अपनी समझ से मैं इस चर्चा में उठाई गई सभी महत्वपूर्ण बातों का उत्तर दे चुका हूं। कई माननीय सदस्यों द्वारा देश की एकता और संगठन के विषय में व्यक्त की गई आशा से मैं सर्वथा सहमत हूं। यह प्रत्यक्ष है। वही हमारा लक्ष्य है, और उसके लिए हम प्रयत्न करेंगे। किसी संकट के पैदा होने की सम्भावना हो या न हो, हमें ऐसा करना ही होगा। मैं नहीं चाहता कि इस सदन में या देश में इन चर्चाओं को लेकर कुछ सनसनी फैले। हमें सतर्क और सावधान रहना होगा और हमें इकट्ठे होकर साथ-साथ काम करना होगा, और ऐक्यपूर्वक कार्य करने पर अन्त में सशस्त्र सैनिकों की संख्या को ही सब कुछ नहीं कहा जा सकता है।

कुछ माननीय सदस्यों ने अनिवार्य सैन्य सेवा सम्बन्धी संशोधन रखे हैं। देश को दुर्बल बनाने का यदि कोई विशेष तरीका हो सकता है, तो वह अनिवार्य सैन्य सेवा ही है। अनिवार्य सैन्य सेवा का अर्थ क्या है? मैं सिद्धान्तत: या व्यवहारत: इसके विरोध में नहीं हूं। तनिक इस पर ध्यान दीजिये। यदि हम अपनी सारी शक्ति अनिवार्य सैन्य सेवा में लगा दें तो इससे बहुत से लोगों को निस्संदेह शारीरिक दृष्टि से लाभ पहुंचेगा। पर इसमें व्यय होने वाले धन को किसी न किसी मद से लाना होगा। अन्तत: यह उन आर्थिक-सुधार के उपक्रमों में से लाया जायेगा, जिनको हम चलाने की चेष्टा कर रहे हैं। अन्तत: देश की शक्ति, आर्थिक प्रगति पर तथा अन्य चीजों पर अधिक निर्भर होगी। यदि हम आर्थिक दृष्टि से दुर्बल हैं, तो बहुत से लोगों के फौजी प्रशिक्षण पा लेने से ही देश का कुछ लाभ नहीं होगा।

श्री एस० एस० मोरे (शोलापुर) : क्या आप दोनों को मिला नहीं सकते हैं?

श्री जवाहरलाल नेहरू : दो ही नहीं और भी बहुत सी बातें हैं। माननीय सदस्य यह मानेंगे कि राष्ट्रीय योजना का यही लक्ष्य है कि बहुत सी चीजों को एक साथ जोड़ा जाये और उन में प्राथमिकता निर्धारित की जाये। योजना में कमी हो, यह पृथक् बात है। पर सारी योजना इसी पर आधारित है।

राष्ट्र की सुरक्षा कई तत्वों पर निर्भर होती है और पहला स्थान सेना का है। यह बात प्रत्यक्ष है। दूसरा स्थान देश की औद्योगिक क्षमता है, जो सेना का संधारण करती है। अन्यथा सेना बेकार है। तीसरी बात देश की आर्थिक सामर्थ्य है और चौथी बात है देशवासियों का साहस। देश की सुरक्षा के लिए ये सब बातें समान रूप से आवश्यक हैं, और पिछली दो-तीन पहली की अपेक्षा भी अधिक आवश्यक हैं, यद्यपि पहली का होना भी अपेक्षित है।

मेरे प्रस्ताव पर सदन ने जो अनुग्रह प्रदर्शित किया है, उसके लिए मैं उसका कृतज्ञ हूं।

श्री पी० एन० राजभोज (शोलापुर—रक्षित—अनुसूचित जातियां) : मैं एक प्रश्न पूछना चाहता हूं।

अध्यक्ष महोदय : अभी सवाल पूछने का समय नहीं है। शान्ति, शान्ति।

श्री पी० एन० राजभोज : यह हमारे ऊपर बहुत अन्याय हो रहा है।

अध्यक्ष महोदय : अब मैं संशोधनों को लूंगा। माननीय सदस्य बता दें कि वे अपने संशोधन वापस लेना चाहते हैं या उन पर आग्रह करना चाहते हैं।

डा० लंका सुन्दरम्, श्री सैय्यद अहमद, श्री एस० वी० रामास्वामी, श्री एन० सोमना, श्री जेठालाल जोशी, डा० राम सुभग सिंह और पंडित के० सी० शर्मा द्वारा अपने संशोधन वापस लिये गये। श्री रघुरामय्या, श्री पी० एन० राजभोज, श्री सारंगधर दास, श्री टी० के० चौधरी और श्री एन० श्रीकान्तन नायर द्वारा अपने संशोधनों पर आग्रह किया गया। अध्यक्ष महोदय द्वारा श्री वी० जी० देशपांडे के संशोधन के खंड (घ), छ (२) और छ (४) अनियमित ठहराय गये तथा श्री यू० सी० पटनायक का समूचा संशोधन अनियमित ठहराया गया।

श्री वी० जी० देशपांडे के संशोधन के अवशिष्ट अंश, तथा सर्व श्री पी० एन० राजभोज, श्री सारंगधर दास, श्री टी० के० चौधरी और श्री एन० श्रीकान्तन नायर के संशोधन सदन द्वारा अस्वीकृत किये गये।

अध्यक्ष महोदय : अब श्री रघुरामय्या का ही संशोधन शेष है।

प्रश्न यह है कि :

प्रस्ताव के अन्त में यह जोड़ दिया जाये :

"और उस पर विचार करने के बाद यह सदन उस नीति का समर्थन करता है।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अध्यक्ष महोदय : अब मैं प्रस्ताव को संशोधित रूप में सदन के समक्ष रखूंगा।

प्रश्न यह है कि :

"वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और उसके सम्बन्ध में भारत-सरकार की नीति पर विचार किया जाये और उस पर विचार करने के बाद यह सदन उस नीति का समर्थन करता है।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

लोक लेखा समिति में राज्य परिषद के सदस्य सम्मिलित करने सम्बन्धी प्रस्ताव

अध्यक्ष महोदय : अब सदन १२ मई, १९५३ को श्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा प्रस्तावित लोक लेखा समिति में राज्य परिषद् के सदस्य सम्मिलित करने सम्बन्धी प्रस्ताव पर अग्रेतर विचार करेगा।

श्री एस० एस० मोरे (शोलापुर) : मेरा निवेदन यह है कि यह प्रस्ताव गत १२ मई को प्रस्तुत किया गया था। वह स खत्म